प्रसेन की कविताएँ

व्यक्तित्वांतरण

वो बदल गया है
एकदम बदल गया है
उसका गाल फूल गया है गुब्बारे-सा
कड़वी मगर लाभप्रद बोलने वाली जुबान से
टपकती है एक घातक मिठास
हाथ उठते हैं अब बहुत विशिष्ट अंदाज़ में
पैरों की चपलता जाती रही
पसरे रहने की आदत डाल ली है
गर्दन घूमती ही नहीं
सीने और कमर में भेद नहीं बचा
और तो और
पोशाक भी बदल डाली
लाल की जगह सफेद पहन ली
अजी धोखा न खाना
वह सफेदी कबूतर की नहीं है
शिकार पर झपटने को तैयार
एकाग्र और विनीत भाव में खड़े
बगुले की है
हाँ! वह मेरा मित्र पहले 'कॉमरेड' था!

●

अँधेरी गुफा की भूलभुलैया में
भटकते-भटकते
जहाँ भी थोड़ी रोशनी दिखती
भागता हुआ पहुँचता वहाँ
इस आस में कि रास्ता हो शायद
लेकिन मिलते भटकते हुए लोग
जिनके पास थोड़ी रोशनी थी
पर रास्ता नहीं
और न होती
बाहर निकलने की बेताबी
जबकि कुछ तो आस ही खो चुके थे
मैं अकुलाने लगा
अँधेरे में दम घुटने लगा
जी किया दीवारें तोड़ दूँ
पर वे टस से मस न हुई
अंततः फिर वहीं पहुंच गये
जहां हरी पीली रोशनी दीवारों पर पड़ रही थी
और कलकलाती-सी आवाज़ आ रही थी
कई बार लौट गये थे
रोशनी वालों की यह दलील सुनकर कि
ऐसे भ्रमजाल यहाँ ढेर सारे मिलते हैं
पर रोशनी जैसे खींच रही थी
इस बार रोक न सका खुद को
और बढ़ चला बाहर निकलने की अजेय ज़िद लिए
और आश्चर्य! मैं बाहर था
सूरज धधक रहा था
हरा रंग चारों ओर बिखरा था
झरनों की आवाज़ें आ रही थीं
विश्वास न हुआ, आँखें मीजीं
यकीन होने पर ताज़ी हवा फेफड़ों में भरी
और उस अँधेरी गुफा के मुहाने पर आवाज़ लगायी
''आ जाओ! रास्ता इधर है!'

●

मील के पत्थर पर बैठा, मैं सोचता हूँ फिर-फिर यही
क्यों न तजकर मोह इसका और कुछ आगे बढ़ूँ।
क्यों न आगे और बढ़कर शेष सारा देख लूँ
यूँ ठहरकर क्यों भला मैं मील का पत्थर बनूँ।
ज़िन्दगी रफ्तार का है नाम, रुकना मौत है
सोचता हूँ तुरंत चल दूँ, क्यों रुकूँ मैं क्यों रुकूँ।
हां है कुछ संतुष्ट कुछ कर सके औ पहुँचे यहाँ
पर संतुष्ट होता तो भला क्यों सोचता आगे बढ़ूँ।
है यहाँ छाया घनी और पल भी है विश्राम का
पर जो रुके सो रुक गये विश्राम फिर मैं क्यों करूँ।
ज़िन्दगी की राह पर संघर्ष की इस धूप में
अब तलक चलता रहा तो राह में फिर क्यों थकूँ।
चलता रहे संघर्ष भले ही ज़िन्दगी के अंत तक
जीत ही मंजिल बने विश्राम तब ही मैं करूँ।